ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v5.i12.2017.527

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH – GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository

Social

आज की शिक्षा में स्वायत्तता की समीक्षा

डॉ. कृष्णा महावर *1
*1 असिस्टेण्ड प्रोफेसर, चित्रकला, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

सारांश :– दुसरो से हस्तक्षेप किये बिना हमारे स्यम के फैसले लेने की शक्ति को स्यायत्तता के रूप मे जाना जाता है। और यदि यह शिक्षा से जड़ी है तो बहुत ही महत्वपूर्ण मुद्दा बनकर सामने आती हैं। आज शिक्षा के क्षेत्र मे भी कई राजनीतिक प्रभाव व अन्य हस्तक्षेप देखे जा सकते हैं। जो देश के भविष्य पर भी प्रश्न चिन्ह खड़ा करते हैं। आज जरूरत हैं ऐसे बदलाओ की जो शिक्षा की स्वायत्तता को अराजक होने से भी रोके। यंहा इस लेख में मेरा केंद्र बिंदु जमीनि स्तर पर बदलाओ से है। ना तो मैं यहाँ किन्ही आयोगों की रिपोर्टों के खुलासा करूँगी न ही शिक्षा से जुड़े कोई आंकड़े बताउंगी और ना ही यूजीसी अथवा अन्य किसी संस्थान से जुड़े शोध पर आधारित सन्दर्भ पेश करूँगी। बल्कि यह पूरी तरीके से मेरे अपने निजी अनुभवो अवलोकनों व सुझावों पर आधरित लेख हैं।
आज की शिक्षा पद्धति का रूप बेहद विकृत हो चुका है। शिक्षा सेवा की बजाय व्यवसाय अधिक हो गयी हैं। आज के शिक्षक मासिक तन्ख्वाह पाने वाले चाकर से अधिक कुछ नही है। मैं अपनी बात रवीन्द्रनाथ ठाकुर के उदाहरण से आरंभ करना चाहूंगी। स्वयं उन्हें भी बचपन मे ही स्कूली शिक्षा पद्धति की रटाऊ पढ़ाई व शिक्षक की पिटाई की वजह से विलगाव हो गया था। जिसने उनके बालमन पर जीवनभर के लिए प्रभाव डाला जो आगे चलकर उनके द्वारा शांतिनिकेतन की स्थापना के लिए नीवं की ईंट बना। वे शिक्षा व्यवस्था व शिक्षा की स्यायत्तता से भलिभांति परिचित थे। शिक्षा में छात्रों व शिक्षको दोनो की स्यायत्तता होना जरूरी हैं। परंतु यहीं स्यायत्तता अगर स्वछंदता व अराजकता बन जाये तो भविष्य का विकृत होना तय है।मैं इस पंक्ति को आज की शिक्षा व्यवस्था मे चरितार्थ होता पाती हूँ कि . बोया पेड़ बबूल का आम कहाँ से होय। इस व्यवस्था की आड़ मे शिक्षक व छात्र दोनो ही मनमानी कर रहे हैं।

मुख्य शब्द – शिक्षा, स्वायत्तता, शिक्षा व्यवस्था व शिक्षा की स्यायत्तता

Cite This Article: डॉ. कृष्णा महावर. (2017). "आज की शिक्षा में स्वायत्तता की समीक्षा." *International Journal of Research - Granthaalayah*, 5(12), 401-405. 10.29121/granthaalayah.v5.i12.2017.527.

प्रस्तावना

''दूसरों से हस्तक्षेप किये बिना हमारे स्वयं के फैसले लेने की शक्ति'' स्वायत्ता है। और यह स्वायत्तता शिक्षा से जुड़ी हो तो बहुत ही महत्वपूर्ण मुद्दा बनकर सामने आती है। आज शिक्षा के क्षेत्र में भी कई राजनीतिक प्रभाव व अन्य हस्तक्षेप देखे जा सकते है जो देश के भविष्य पर भी प्रश्न चिन्ह खड़ा करते है। आज जरूरत है ऐसे बदलावों की जो शिक्षा की स्वायत्तता को अराजक होने से भी रोके। यहाँ इस लेख से मेरा केन्द्र बिन्दु जमीनी स्तर पर बदलावों से है। ना तो मैं यहाँ किसी आयोग की रिर्पोटों का जिक्र करूंगी, ना ही शिक्षा से जुड़े कोई आकड़े बताऊंगी और ना ही यु.जी.सी. या अन्य संस्थानों के शैक्षिक शोध पर आधारित संदर्भ पेश करूंगी बल्कि यह पूरी तरह से मेरे अपने निजी अनुभवों, अवलोकनों व सुझावों पर आधारित पूर्णता मौलिक लेख है।

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.1145728

आज की शिक्षा और शिक्षा पद्धति का रूप कुछ ओर ही गया है। शिक्षा आज सेवा ना रहकर व्यवसाय हो गई है। मैं अपनी बात रविन्द्रनाथ टैगोर के उदाहरण से आरम्भ करना चाहूंगी। स्वयं उन्हें भी बाल्यकाल में ही स्कूली शिक्षा की रटाऊ पढ़ाई व शिक्षकों की मार की वजह से इस शिक्षा पद्धति के प्रति विलगाव उत्पन्न हो गया था जो जीवन भर उनके मस्तिष्क पर अमिट रहा। यही भाव आगे चलकर शांतिनिकेतन की स्थापना का कारण बना। वे शिक्षा व्यवस्था और उसकी स्वायत्ता से भलिभांति परिचित थे। रविन्द्रनाथ ठाकुर मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा की बात करके अन्तर्राष्ट्रीय अवरोध की शिक्षा पर बल देकर बौद्धिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिये शिक्षा की बात करके तथा अनुभव केन्द्रित पाठ्यक्रम पर बल देकर वे अपने समय की शिक्षा प्रणाली में आमूल परिवर्तन करना चाहते थे।1शिक्षा में छात्रों व शिक्षकों दोनों की स्वायत्ता होना जरूरी है। परन्तु यही स्वायत्तता अगर स्वच्छंदता व अराजकता बनने लगे जो भविष्य पर सीधा असर पड़ेगा।

''बोया पेड़ बबूल का तो आम कहां से होय'' इसी व्यक्तव्य को मैं आजकल इस शैक्षणिक व्यवस्था में चरितार्थ होता पाती हूँ। इसी स्वायत्तता की आड़ में शिक्षक व छात्र अपनी मनमर्जी व मनमानी करते है। मेरी स्वयं की उच्च्व शिक्षा कला विषय में रही ऐसा विषय जो स्वयं अपने आप में पूरा जीवन है। जीवन जीने की कला है। कई बार कई बातें एक निश्चित समय के बाद ही समझ आती है और अपना असर छोड़ती है। इतने वर्षों बाद जब मुझे छात्रों को उच्च शिक्षा प्रदान करते हुये 14 वर्ष हो रहे है मुझे मेरा छात्र जीवन व मेरे अध्यापकों के पढ़ाने का तरीका अक्सर याद आता है जो कि शायद उस समय कुछ ओर होता तो पढ़ाई खत्म करने के बाद जितना समय मैंने स्वयं अपने रास्तों की खोज में लगाया वह व्यर्थ नहीं होता। 'शिक्षा के उद्देश्य' नामक अपनी प्रसिद्ध पुस्तक में प्रोफेसर हवाइडेड ने विश्वविद्यालयों का राष्ट्र निर्माण में योगदान के संदर्भ में लिखा है – ''विश्वविद्यालयों ने हमारी सभ्यता के बौद्धिक मार्ग दर्शकों को प्रशिक्षित किया। यही से विधिज्ञ, राजनीतिविद, चिकित्सक, वैज्ञानिक प्राध्यापक एवं साहित्य सेवी निकले है विश्वविद्यालय ही उन आदर्शों के घर रहे है जिनकी सहायता से लोग अपने वर्तमान युग के संक्षोभ का सामना करते है।2 यह आकरण नहीं है कि आजकल बी.टेक., पी.एचडी. जैसे उच्च्व शिक्षा डिग्रीधारी युवा चपरासी या अन्य चतुर्थ श्रेणी की नियुक्तियों में बड़ी संख्या में आवदेक के रूप में देखे जाते है।3

मैं उन कुछ गैर जरूरी व व्यर्थ तकनीकों की ओर संकेत करूंगी जैसा आज भी कई अध्यापक यथावत् करते है। जैसे अध्यापक या व्याख्याता की नौकरी लगते ही अधिकतर व्यक्ति ऐसा महसूस करते है मानों बहुत बडा खजाना मिल गया हो। पहला ख्याल जो मन में आता है वो ये कि अब मेहनत से छुट्‌टी, मुक्ति अब तो हर महिने की। बंधी बंधाई तनख्वाह मिलनी है। जो कि समय के साथ बढ़ती ही जायेगी, कम कभी नहीं होगी (कुछ विरले ही होंगे जो नियुक्ति या कार्यभार ग्रहण के समय अपनी जिम्मेदारी को समझते होंगे।) अधिकतर शिक्षकों की नजर मात्र और मात्र उस 'नौकरी' से जुड़ी आय पर ही होती है। शिक्षक का अपने कार्य स्थल पर जाना और वापस आना एक नियम तो होता है। जैसे आजकल बॉयोमैट्रिक मशीन ने भी उन्हें बाध्य कर दिया है। तब भी आने और जाने के नियम मात्र से शिक्षा ही उत्कृष्टता साबित नहीं की जा सकती। आने और जाने के समय के बीच का समय कितना महत्वपूर्ण और परिणामकारक होता है यह तो वे विद्यार्थी भी भीलभांति समझते है जो अपने घर से कितनी कठिन परिस्थितियों में निकलते होंगे अपनी कक्षाओं में आने के लिये कुछ अभिभावकों से जेब खर्च लेकर, कुछ गरीब परिवारों के जो जैसे तैसे मोटी फीस का इन्तजाम करते होंगे या कुछ लड़कियाँ जिन्होंने अपनी जिद पर, परिवार से लड़ झगड़ कर दाखिला लिया होगा, ऐसे कई विद्यार्थी उस कक्षा में मिश्रित होते है और शिक्षक के कक्षा में आने (भले ही लेट ही सही) पर उम्मीद भरी निगाहों से उन्हें देखते है कि आज शायद काफी कुछ नया सीखने को मिलेगा परन्तु आज कल कक्षाओं में क्या होता है। ''अधिकांशता सरकारी संस्थाओं में''। शिक्षक आते ही कई बार अनर्गल बातों पर छात्रों को डांटना आरम्भ कर देते है और यदि मोबाईल फोन बज जाये तो सारी विस्तारित बातें उसी समय फोन पर हो जाया करती है बिना इस संकोच के कि विद्यार्थी सामने बैठे है। कुछ शिक्षक तो कक्षाओं के अटेण्डेस रजिस्टर को अप टु डेट रखना ही अपना सर्वस्व व सर्वप्रथम कर्त्तव्य मानते हुये कक्षा का आधे से ज्यादा समय हाजिरी लेने में ही व्यतीत कर देते हे। ऐसे में यदि कोई सह

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.1145728

शिक्षक कक्षा में आ जाये तो भी उससे मेल मिलाप भी उसी पीरियड के दौरान होता है। कई बार चाय नाश्ता भी हो जाता है। खैर कुछ शिक्षक पढ़ाते भी है तो आज 21 वीं सदी में भी वही पुराने घिसे पिटे तरीकों से कक्षाएं लेते है। सैद्धान्तिक कक्षाओं में तो हाल ही मत पूछो ऐसी पुरानी डायरी या नोट्स जिनसे शिक्षकों ने स्वयं पढ़ा होगा उन्हीं पीले पड़े हुये पुराने नोट्स से कक्षाओं में श्रुति लेख की तरह लिखवाया जाता है। ऐसे में कई सजग छात्र छात्राऐं कक्षाओं में आना भी छोड़ देते है। क्योंकि किताबों व पुराने नोट्स से तो घर पर भी पढ़ा जा सकता है। कक्षाओं में तो शंकाओं के समाधान, कॉन्सेप्ट की समझ व तथ्यों की विस्तारित व्याख्या होना चाहिये जो उनके मस्तिष्क को किताबी पढ़ाई से कहीं अधिक दे और ज्ञान को आगे ले जाये।

प्रायोगिक कक्षाओं में भी खाना पूर्ति होती है। शिक्षक अपनी कुर्सी पर ही बैठे–बैठे कुछ जानकारियाँ देते है जिन्हें छात्रों के बीच में आकर समझाने की आवश्यकता होती है। पीरियड की घण्टी बजने से दस पन्द्रह मिनट पहले ही घड़ी ताकना आरम्भ हो जाता है। अमूमन यही होता है। मैंने स्वयं ने भी देखा या भोगा है। पुरूष शिक्षक सिस्टम की बातों, राजनीति की चर्चाओं और महिला शिक्षक आचार, पापड़, साड़ी, शॉपिंग की बाातों में व्यस्त दिखाई देती है। यह बातें करने में कोई बुराई नहीं है परन्तु अपने कर्म क्षेत्र (पीरियड के दौरान) से दूर रहकर की जानी चाहिए अपने निजी समयों में। ऐसा गैर जिम्मेदाराना शैक्षिक माहौल अपनी अगली पीढ़ी को कभी भी जिम्मेदारी नहीं सिखा सकता। ऐसे माहौल में कितने भी आयोग बिठा ले, समीतियाँ बना लें, योजनाऐं लागू कर दें। मूल रूप में कहीं कोई परिवर्तन ना हुआ है ना ही हो रहा है। राजस्थान कॉलेज आयुक्तालय ने कुछ वर्षो पूर्व प्रत्येक महाविद्यालय में एक सुझाव बक्सा रखवाया था। छात्र–छात्राऐं उसमें अपनी प्रतिक्रियाएँ या समीक्षात्मक राय भी डाल सकते थे। परन्तु उनका क्या हुआ? हाल ही में शिक्षकों की आवाजही को पाबन्द करने के लिये बायोमेट्रिक मशीन भी लगवायी गई है परन्तु गैर जिम्मेदार शिक्षकों ने तो इसका भी तोड़ निकाल लिया है समय पर आते है समय पर जाते है बीच के समय में निजी कार्य करते है।

इस माहौल में पढ़ रहे विद्यार्थी पास बुक्स, कोचिंग या निजी ट्यूशन का सहारा लेकर रटकर परिक्षाएँ उर्त्तीण कर भी लेते है। अव्वल भी आ जाते है और प्रतियोगी परीक्षाओं की भी इसी प्रकार की किताबी पढ़ाई कर सरकारी नौकरियों में आ जाते है। उन्होंने जैसा माहौल स्वयं देखा वैसा ही वे भी अपने–अपने क्षेत्रो में रचते हैं। यकीन मानिये शिक्षक की भूमिका किताबी पढ़ाई करा देने व परीक्षाएँ पास करवा देने से कही अधिक होनी चाहिये। आज पुनः वही गुरू शिष्य वाली तरजीह पर अध्यापक की आवश्यकता महसूस होती है। ऐसे गुरू जो शिष्यों का सर्वस्व विकसित करने में सहयोग देते है।

शिक्षक विद्यार्थियों को अपनी सम्पत्ति समझ निजी कार्य भी करवाते है। अपने फोन बिजली के बिल जमा करवाना आदि। विद्यार्थी भी कम नहीं है वे भी अधिक अंक पाने की लालच में शिक्षकों के प्रिय बने रहने के लिये उनकी सेवा में कोई कमी नहीं छोड़ते। प्रायोगिक परिक्षाओं में जब बाह्य परीक्षक आते है तो आन्तरिक परिक्षक अपने मुँह से कहकर विद्यार्थियों के अंक बढ़वाते है। यदि वास्तव में वर्ष भर बच्चों के साथ मेहनत की गई हो तो ऐसी नौबत ही ना आये। निजी महाविद्यालय तो अपना परिणाम बेहतर करने के लिए क्या–क्या हथकण्डे नहीं अपनाते, इससे तो सभी वाकिफ है।

खैर जो स्थिति है उसको स्वीकार भी कर लिया जाए तो सबसे बड़ी समस्या यह है कि नियुक्ति के समय, मुख्यतया उच्च शिक्षा में, कोई प्रशिक्षण तुरन्त ही नहीं होता। जो ओरियण्टेशन व रिफ्रेशर कोर्स होते है वह तो अध्यापकों के घुमने फिरने व मनोरंजन के कारण बनते है। शिक्षक उन्हें गंभीरता से नहीं लेते है। मुझे याद नहीं कि आज तक किसी भी शिक्षक को इस प्रकार के प्रशिक्षण में नाकाबिल माना गया हो, सिस्टम द्वारा सभी शिक्षक पूर्ण लायक पाये जाते है।

 ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.1145728

शिक्षक का स्वयं स्वीकृत उदार और सेवानिष्ठ त्यागमय जीवन समाज–सागर में आलोक–स्तम्भ की भांति सुस्थिर रहकर सार्वजनिक जीवन का दिशा निर्देशन करता रहा किन्तु ब्रिटिश शासन ने निहित स्वार्थो के लिये शिक्षक से उसकी स्वायत्त छीन ली और उसे वेतन भोगी चाकर बना दिया। परिणामतः शिक्षा का उदात्त उद्देश्य खो गया, शिक्षकिय गरिमा आहत हुई, शिक्षालय अधिकारियों और बाबुओं का निर्माण करने वाले कारखाने बन कर रह गये।4

आजकल तो सेमिनार, कार्यशालाऐं आदि में भी भागीदारी मात्र इसीलिए होती पायी गई है कि इनकी वजह से उनकी वेतन वृद्धि व बायोडेटा अपडेट होता है। कितने मूल व गंभीर शोध पत्र आते है यह सभी जानते है। महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों में कई स्थानों पर पाठ्यक्रम भी बहुत पुराने ही चले रहे है। अतः शिक्षा भी वही पुरानी ही दी जा रही है। कई अच्छे शिक्षक इस सरकारी तंत्र से अपने आपको मुक्त कर लेते है, ऐच्छिक सेवा निवृति ले स्वतंत्र रूप में अध्यापन कर ज्ञान बांटते है। विद्यार्थियों में एक जीवन दृष्टि तो अच्छे गुरू से ही प्राप्त हो सकती है, किसी संस्था से नहीं। शिक्षक तो कई बार अपनी वेतनवृद्धियों, इनकम टेक्स बचत तथा और आर्थिक लेखे जोखे में ही व्यस्त रहता है और यदि ये सब समय पर उन्हें नहीं मिला हो तो सिस्टम से विरोध स्वरूप गतिविधियों व अपनी मांग मनवाने में ही अपनी मानसिक व्यस्तताएँ अधिक रखता है।

मैंने आज तक ऐसा कोई प्रतिरोध नहीं देखा जहाँ कोई भी अध्ययन या छात्र अपनी कक्षाओं की गुणवत्ता बढ़ाने के लिये किया गया हो वेतन आयोगों से उम्मीद लगाता शिक्षक नौकरी लगने से सेवानिवृत होने तक अपना स्टेटस स्थापित करने के लिये जल्दी से जल्दी चौपहिया वाहन, मकान खरीदते है सब कुछ करते है। बहुत कम ऐसे शिक्षक होते है जो नियमित स्वयं का ज्ञान वर्द्धन भी करते है। मैंने स्वयं ने ऐसे कई शिक्षक देखे है जिनके अध्यापक से मैं प्रभावित हुई हूँ। वे समय के साथ चलते है। अपनी अध्यापन तकनीक को भी अपडेट करते रहते है। ऐसे शिक्षकों की कक्षाऐं भरी रहती है। छात्र छात्राऐं ऐसे शिक्षकों की कक्षाओं का इन्तजार करते पाये गये है।

शोध के हाल भी बेहाल है महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों में सैकड़ों शोध होते है परन्तु उनमें बहुत कम ऐसे शोध होते है जो वास्तव में अर्थपूर्ण होते है। शेष शोध तो अपनी संस्थान को यू.जी.सी. या अन्य द्वारा रेंकिग दिलवाने में ही काम आते है। शिक्षक व्यवसाय पर उतारू हो गये है। मेरे अनुभव में एक ऐसे विद्यार्थी का शोध शामिल है। जिसने अपने शोध परीक्षक को राशि देने के लिये अपनी गांव वाली जमीन बेचनी पड़ी थी।

बहरहाल शैक्षिक माहौल से जुड़ी ऐसी न जाने कितनी ही अनुभूतियाँ है जो सकारात्मक कम नकारात्मक अधिक है। मुझे ऐसा लगता है कि पूरे शैक्षणिक तंत्र में जो प्रमुख घुरी है शिक्षक व छात्र यदि इन दोनों घुरियों को ही गंभीरता से अपने अपने कर्त्तव्य निभाने दिये जाने की स्वायत्तता दी जाये तो मात्र आर्थिक सहायता, भवन, अन्य यान्त्रिक सुविधाऐं ही शेष रह जाती है। वरना तो शांति निकेतन जैसे वैश्विक कला संस्थान में तो प्रकृति के करीब रह कर भी एक शानदार शिक्षा प्रदान की जाती है। जहाँ से शिक्षा प्राप्त करने का मुझे भी सुअवसर मिला था। अतः इस लेख के अन्त में मेरे कुछ सुझाव पेश करना चाहूंगी जो अधिकतर तो सभी जानते होंगे फिर भी दोहराना चाहूंगी।

शिक्षकों के लिये :–

1- अति आवश्यक रूप में प्रत्येक शिक्षक को स्व अनुशासित होना ही होगा।
2- अति आवश्यक रूप में अपने–अपने विषय की नवीनतम जानकारियाँ रखते हुये निरन्तर अपने आप को अपडेट करते रहना होगा।
3- अध्यापन के साथ अध्ययनरत् भी रहना होगा।
4- समय की पाबन्दी करनी होगी।

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.1145728

5- अपने अध्यापन् के तरीकों को समय के साथ बदलते हुये नये तरीके अपनाना होगा।
6- अपने शिक्षक संस्थानों मे प्रवेश करते ही मात्र और मात्र पुरा केन्द्र बिन्दु विद्यार्थी ही होने चाहिए अपने निजी कार्य अतिरिक्त समय में हो।
7- विद्यार्थियों के साथ मित्रवत् व्यवहार हो।
8- विद्यार्थियो को स्वयं के विकास की स्वतंत्रता दी जाये उनकी शंकाओं के समाधान समय पर हो।
9- पाठ्यक्रम के परे जाकर भी सम्बन्धित तथ्यों के ज्ञान प्रसार किये जायें।

यों तो ऐसे बहुत से सुझाव और भी हो सकते है यदि शिक्षक अपनी जिम्मेदारी वैसे ही उठा ले जैसे स्वयं के बच्चों के लिये उठाते है तो किसी और अन्य बात की आवश्यकता ही नहीं रह जाती है। इस प्रकार विद्यार्थी भी पूर्ण समर्पण भाव के साथ अपने आप को ज्ञानार्जन का सुपात्र बनाये। अपने शिक्षक पर पूर्ण विश्वास रखें व आज्ञाकारी हो, तो उसे भी जीवन में सफल होने से कोई नहीं रोक सकता। दोनों को अपने अपने मानदण्डों पर खरा उतरना होगा। नियुक्तियों में भी योग्यता की प्रमुख हो। नवाचारों को प्रोत्साहन दिया जाये। रचनात्मकताओं को बढ़ाया जाये। नहीं तो आज की शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों को नौकरी पाने की ही ललक रहती है और नौकरियाँ ना होने की स्थिति में वे और कुछ करने लायक भी नहीं रहते और यहाँ पर ये पंक्तियाँ याद आ रही है।

"न पढ़ते तो खाते सौ तरह कमा कर, मारे गये हाय तालीम पाकर
ना खेतों में रेहट चलाने के काबिल, न बाजार में माल ढानें के काबिल।"

हमें गुणात्मक शिक्षा अपनानी होगी, शिक्षकों को गुरू बनाना होगा तभी प्रति वर्ष आने वाले शिक्षक दिवस पर उत्सव मानने का सही अर्थ होगा।

संदर्भ

[1] shodhganga.inflibnet.ac.in, शोध अध्ययन की पृष्ठभूमि
[2] www.hindikunj.com, उच्च शिक्षा में गुणवता और स्वायत्तता, सुशील कुमार तिवारी
[3] www.hindikunj.com, उच्च शिक्षा में गुणवता और स्वायत्तता, सुशील कुमार तिवारी
[4] indiavoice, tv, समाज कल्याण के लिये शिक्षक की स्वतंत्रता और स्वायत्तता आवश्यक है, डॉ. कृष्ण गोपाल मिश्र

*Corresponding author.
E-mail address: krish_mahawer@ yahoo.co.in